International Journal of Research in Hindi
www.hindijournal.in
ISSN: 2582-3493
Received: 31-07-2025, Accepted: 30-08-2025, Published: 15-09-2025
Volume 7, Issue 2, 2025, Page No. 6-13

# जौनसार बावर का सांस्कृतिक एवं सामाजिक अध्ययन

**रीता शर्मा, डॉ० शुभा मटियानी**
हिंदी विभाग, डी० एस० बी० परिसर, कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल, उत्तराखण्ड, भारत

**सारांश**
जौनसार उत्तराखण्ड राज्य का वह क्षेत्र है. जहाँ जौनसारी जनजाति निवास करती है। जौनसारी राज्य का दूसरा सबसे बड़ा समुदाय होने के साथ–साथ गढ़वाल क्षेत्र का भी सबसे बड़ा समुदाय है। इस क्षेत्र के अन्तर्गत देहरादून का चकराता, कालसी, त्यूनी, लाखामण्डल आदि क्षेत्र टिहरी का जौनपुर क्षेत्र, उत्तरकाशी का रवाईं क्षेत्र आता है। देहरादून के कालसी, चकराता, त्यूनी तहसील को जौनसार–बावर क्षेत्र कहा जाता है। जौनसार–बावर अपनी संस्कृति, भाषा बोली, रीति–रिवाज, खान–पान, रहन–सहन व वेशभूषा आदि की दृष्टि से अनूठा है, जो इसे अन्य समाज से अलग करता है। अतिथि देवो भवः की परम्परा इस समुदाय की समृद्ध संस्कृति का परिचायक रही है। इस संस्कृति के अन्तर्गत हारूल, रासो, धुमसू, झेता, तादी. नारी–पाण्डव नृत्य आदि आते हैं। जौनसारी जनजाति के मुख्य त्यौहार विस्सू (वैशाखी), जागड़ा, पाईता (दशहरा), दियाई (दीपावली), नुणाई, मरोज (माघमेला) आदि हैं। प्रस्तुत शोध पत्र जौनसार बावर के सांस्कृतिक एवं सामाजिक अध्ययन पर आधारित है। प्रस्तुत शोध पत्र में जौनसार के सांस्कृतिक एवं सामाजिक पर अध्ययन पर किया गया है ।

**मूल शब्दः** जौनसार–बावर, जौनसारी जनजाति, संस्कृति एवं सामाजिक अध्ययन, रीति–रिवाज व त्यौहार, भाषा–बोली व लोकनृत्य

साहित्य समाज का पथप्रदर्शक होता है। बालकृष्ण भट्ट ने कहा है साहित्य समाज का दर्पण है साहित्य दो प्रकार का होता है लोकसाहित्य और परिनिष्ठित साहित्य। प्राचीन काल से ही लोक मे प्रचलित साहित्य की वे विभिन्न विधाएँ जो मौखिक तौर पर पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरित होती है. उन्हें लोकसाहित्य कहा जाता है। जौनसार–बावर क्षेत्र में भी ऐसी कई विधाऐं लोगों के बीच मौखिक परम्परा में विद्यमान है। जौनसार–बावर क्षेत्र में मिलने वाली लोकसाहित्य की प्रमुख विधाऐं है – लोकगीत, लोकथाएँ, लोकगाथाएँ, लोकनाट्य, अनाउणे, भुजाउणियों। इस क्षेत्र में प्रचलित लोकसाहित्य को अद्यतन पूर्ण रूपेण संकलित नहीं किया जा सका है। भूमंडलीकरण के दौर में एक ओर अंग्रेजी भाषा हिन्दी भाषा पर दबदबा बना रही है, दूसरी ओर क्षेत्रीय भाषाओं का हिन्दीकरण हो रहा है या वे धीरे–धीरे अपना अस्तित्व खो रही हैं। ऐसी स्थिति में जौनसारी भाषा के लोकसाहित्य और संस्कृति के संरक्षण अध्ययन की दिशा में कार्य करने हेतु शोधार्थी ने जौनसारी लोकसाहित्य का सांस्कृतिक अध्ययन पर शोध कार्य करने का निश्चय किया। महाभारत काल से जुड़ा जौनसार बावर क्षेत्र एक आदिवासी जनजातीय क्षेत्र है। अपनी मौलिक अर्वाचीन संस्कृति के लिए यह विश्व में प्रसिद्ध है। नगाधिराज हिमालय की उपत्यकाओं में रचा बसा यह विशाल भू–भाग प्रशासनिक दृष्टि से यद्यपि नवगठित उत्तरांचल राज्य के गढ़वाल मंडलान्तर्गत जनपद देहरादून की उत्तरी सीमा तहसील चकराता में स्थित है, किन्तु अपने भौगोलिक विस्तार और अलग सांस्कृतिक पहचान के कारण नवगठित राज्य में इसका पृथक सार्वभौम अस्तित्व है। उत्तरांचल राज्य के मुख्यतः तीन भाग हैं गढ़वाल, कुमांऊ और जौनसार बावर। तीनों क्षेत्रों की पृथक बोलियां (भाषाए) हैं गढ़वाली, कुमांऊनी और जौनसारी। कुमांऊ और गढ़वाल तो पुराने समय से ही शिक्षा और आर्थिक विकास की दौड़ में आगे निकल गये किन्तु जौनसार बावर आज भी पिछड़ा हुआ है।

दुर्भाग्य कहें या दैवयोग कि इन्ही दो क्षेत्रों से जुडा जौनसार बावर पिछड़ा रह गया। इसे अपनी आदिम अवस्था से उबार कर राष्ट्र की मुख्य धारा में लाने के लिए सरकार को सन् 1967 में अनुसूचित जनजातीय क्षेत्र घोषित करना पड़ा जिससे विकास कार्यों को इस क्षेत्र में प्राथमिकता से लागू किया जाय और यहां के शिक्षितों को रोजगार व सरकारी सेवा के अवसर प्राप्त हो सकें।

जौनसार बावर की पौराणिक, धार्मिक तथा पारम्परिक सामाजिक मान्यताओं के कलेवर में समाहित इतिहास के वह विस्मृत आख्यान जिनमें जगत ग्राम के ताम्रपत्रों के अभिलेख, महाभारत से जुड़ा प्रसिद्ध गांव लाखामंडल, लाखामंडल अभिलेख आदि के साथ साथ अशोक के सन्देशों का शिलालेख चित्रशिला, मत्स्य देश के राजा विराट का राज्य व उसके किले के भग्नावशेष बैराट गढ़, राजा सामूशाही के अत्याचारों से त्रस्त जनता के त्राण के लिए अवतरित चार महासू देवता, पाँच भाई पॉडव तथा द्रोपदी से जुड़े वह प्रश्न जिनके अनुसार यहाँ बहुपतित्व प्रथा का प्रचलन माना जाता है, सैकड़ों प्रकरण विद्यमान हैं। इतिहास की यह बहुमूल्य सामग्री और परम्परागत लोकगीतों के अक्षय भंडार यहां की संस्कृति के मुखर अवयव हैं। मौखिक रूप से जनश्रुतियों के कंठहार में बसी जौनसार बावर की सांस्कृतिक विरासत के ये आख्यान चमत्कृत करने वाले बेजोड़ उदाहरण हैं। जौनसार बावर की सांस्कृतिक सामाजिक पृष्ठभूमि से सम्बन्धित विषयों पर देश–विदेश के सैकड़ों शोधार्थी शोध कार्य कर चुके हैं। विशेषकर सामाजिक अध्ययन के लिए मानव विज्ञान तथा समाजशास्त्र के शोधार्थियों की तो सदैव भीड़ लगी रहती है। परन्तु लिखित आधिकारिक प्रामाणिक सामग्री के अभाव में उन शोधार्थियों के शोध कार्यों की सत्यता व प्रामाणिकता संदिग्ध हो जाती है, आशंकाओं के दायरे में आ जाती है, उन पर अनेक प्रश्नचिन्ह लग रहे हैं।

जौनसारी बोली को भाषा कहा जा सकता है। क्योंकि यह बोली भाषा के संस्कार के निकट है। ब्राह्मण लोग अपनी पोथी से गायन शैली में पहले काव्यांशों का पाठ करते हैं फिर उसका भावार्थ करके समझाते हैं। स्त्री–पुरुष–बच्चे सब को उसमें सरलता से समझने में कठिनाई नहीं होती जबकि हिन्दी में समझने में कठिनाई होती है। मातृभाषा का अपना अलग महत्त्व होता है। पाँडव–नृत्य में भी जो महाभारत के श्लोक (पंडुवाणी) गाये जाते हैं, श्रोताओं को समझ में आ जाते हैं क्योंकि वह मातृभाषा में होते हैं। उसमें पाँडवों द्वारा फसल बोने, फसल काटने, गाय–भैंस चराने, दूध दुहने के सारे वृतान्त गा–गा कर टुकड़ों में बोले जाते हैं। कौरवों और पाँडवों का युद्ध (महाभारत) नृत्य–गीत शैली में पंडुवाणी गा–गा कर प्रस्तुत किया जाता है। पाँडव नृत्य के पात्र भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव, द्रोपदी, माता कुन्ती, हनुमान, माँ काली सब अपनी बात गा–गा कर बोलते हैं।

यह भी कम आश्चर्यजनक नहीं है कि युधिष्ठिर चूंकि धर्मराज हैं इसलिए वो नृत्य नहीं करते। मत्स्य देश के राजा विराट के बाद उनके उत्तराधिकारी राजा सामूशाही के अत्याचारों से त्रस्त होकर जब एक दिन हुणाभाट की पत्नी को स्वप्न में किरमिर दानव के वध की युक्ति चालदा देवता के वीर शिड़कुडिया बताते हैं तो वह अपने पति को कश्मीर जाकर चार भाई महासू देवताओं को मैन्द्रथ में बुलाने के लिए भेज देती है।

हुणाभाट चारों भाई महासू देवताओं से अनुनय विनय करता है और उन्हें किरमिर दानव को मारने तथा दुष्ट सामूशाही राजा के अत्याचारों से मुक्त कराने के लिए मैन्द्रथ आने का निमंत्रण देता है। चारों भाई महासू देवता मैन्द्रथ आते हैं और किरमिर दानव तथा राजा सामूशाही का वध करके जनता को उनके अत्याचारों से मुक्ति दिलाते हैं। इस पूरी कथा का वृत्तान्त ठीक उसी प्रकार है– जैसे राजा भगीरथ के प्रयत्नों से गंगा धरती पर आई, वैसे ही हुणाभाट के प्रयत्नों से चार भाई महासू देवता कश्मीर से जौनसार बावर आए। हनोल में महासू देवता का मन्दिर उन्ही चारों भाइयों की जीवंत स्मृति का प्रतीक है।

जौनसार बावर के लोकगीत, शिल्प और भावबोध की दृष्टि से भी सर्वोपरि हैं। कहीं ये कबीर से साम्य स्थापित करते हैं तो कहीं रहीम से। जौनसारी लोकगीत छोड़ कबीर, रहीम और बिहारी के नीति के दोहों का ही प्रतिरूप है। अर्थ की दृष्टि से जौनसारी छोड़े अधिक सार–गर्भित है, जैसे –

कबीर का दोहा–कबिरा गर्व न कीजिए, काल गहे कर केस।
ना जाने कित मारि हौं, क्या घर क्या परदेस।
जौनसारी छोडा जा त माणसें जीणं, ता नूं रणं मनुड्या गुती।
अए मणसातें मरी जाणं, खाड़े रणं खोबुड्या सुती।

हिन्दी के दोहे के अर्थ की यहां आवश्यकता नहीं है परन्तु जौनसारी छोड़े का अर्थ है कि मनुष्य जब तक जीवित है या जी रहा है उसे अपने मन में अहंकार का भाव नहीं लाना चाहिए क्योंकि यह जीवन जिस पर मनुष्य घमण्ड करता है वह क्षण भंगुर है, मृत्यु रूपी तलवार सदा सिर पर लटकी रहती है। मृत्यु निश्चित है परन्तु उसका समय और स्थान अनिश्चित है। घर अथवा बाहर कहीं भी मृत्यु हो सकती है।

रहीम का दोहा –मन चाही होती नहीं, हरिचाही तत्काल । बलि चाहें थे स्वर्ग को, भेज दिया पाताल।
जौनसारी छोड़ा–ऊँचे टिम्बुल्या लागो नाराणं, रूंदो । भूजो बीना जामेन्दो सूचो बिना जिय रो हुन्दो।

रहीम के दोहे के हिन्दी अनुवाद की आवश्यकता नहीं किन्तु जौनसारी छोड़े का अर्थ है कि पर्वत की ऊँची चोटी पर बैठकर स्वयं सृष्टिकर्ता रोने लगता है कि मैंने यह कैसा कठोर नियम बना दिया है कि जिसमें भाग्य का कर्म से कोई मेल नहीं है। जिस प्रकार भुना हुआ अन्न पुनः अंकुरित नहीं हो सकता ठीक वैसे ही कर्म के विरूद्ध किए गए कार्य का फल इच्छा के अनुकूल कभी नहीं हो सकता।

लोकगीतों की महान परम्परा में सीलोग ऐसी गायन शैली है जिसे विलम्बित राग में टुकड़े–टुकड़े करके पद्यांशों को गाया जाता है। अन्त में लम्बी लय के साथ गीत का तारतम्य समाप्त किया जाता है।

उस काल में ऐसे अनेक वीर योद्धा हुए जिन्होंने इन असुरों का वध किया और मानव जाति की रक्षा की जैसे हरिया होगा दोनों भाई बड़े पराक्रमी और सूरमा थे। आज भी उनके शौर्य और पराक्रम की गाथाएं सीलोग गीतों में गाई जाती हैं। अनेक योद्धाओं की वीरता के वर्णन सीलोग गीतों में गाये जाते है जो अनुसंधान का विषय है।

जागर गीतों में जागरण का स्वर प्रमुख है। जागर गीतों की लम्बी परिपाटी है। सृष्टि पर पाप और अन्याय की वृद्धि और सत्य और धर्म की हानि पर, जागर गीतों में उन देवताओं, महामानवों का आह्वान किया जाता है जो भारतीय जीवन दर्शन के उज्ज्वलतम आदर्श रहे हैं। जौनसार बावर में पौंडवों को आदर्श माना जाता है तथा पाप और अधर्म की अभिवृद्धि देखकर आज भी इस विषम परिस्थिति से जूझने के लिए धर्मराज युधिष्ठिर, महाबली भीम, महान धनुर्धर अर्जुन तथा नकुल और सहदेव सहित अपूर्व स्नेहमयी माता कुन्ती को स्मरण कर उनका आह्वान किया जाता है। जागर गीतों की गायन शैली नितान्त शास्त्रीय विधा है। रसमग्न होकर जो गायक जागर गीत गाते हैं उन्हें जागरी भी कहते हैं।

हारूल गीत प्रायः दीपावली के अवसर पर गाए जाते हैं। इसमें वीरता और प्रणय गीतों की अधिकता होती है। एकल गीतों की हारूल में जहां एक ओर पाँडवों की यश गाथा और सृष्टि की उत्पत्ति की हारूल गाई जाती है वहीं दूसरी ओर इन हारूलों का श्रीगणेश सतयुग के महानायक आदि पुरुष भगवान राम से आरम्भ होता है। द्वापर के श्री कृष्ण और राधा, रुक्मणी को भी हारूल गीतों में गाया जाता है। जौनसार बावर के लोकगीत कहीं भी द्वितीय नहीं हैं, ये सर्वत्र अद्वितीय हैं। महान है वह लोक–संस्कृति जो इन लोकगीतों में झंकृत है, प्रतिबिम्बित है, और इसके सम्पूर्ण वांङ्गमय में महापुरूषों के जीवन चरित, देवी–देवताओं के रहस्यमय चमत्कार, जीव और जगत के व्यवहारिक मानवीय उदात्त दृष्टान्त भरे पड़े हैं।

**जौनसार बावर के लोकगीत और संस्कृति के इतिहास की विस्तृत रूपरेखा**

लोकगीत लोक मानस की सनातन आदिम प्रवृत्तियों को प्रतिबिम्बित करते हैं। लोक संस्कृति जहां लोक के सम्पूर्ण वांङ्गमय की औदार्य प्रांजलता को अभिव्यंजित करती है वहीं लोकगीत संस्कृति के एक बड़े भाग की युगानुरूप प्रांसगिकता को अक्षुण्ण बनाए रखते हैं। जौनसार बावर की समूची लोक–संस्कृति प्रचलित पौराणिक, धार्मिक और पारम्परिक लोकगीतों में अभिव्यक्त है। यहां के निवासी आर्यों के वंशज, शैवमत के अनुयायी (वैष्णव मत को भी मानते हैं) कुलाधिदेव महासू देवता के प्रबल उपासक हैं। सत्य जीवन का आधार तथा परिश्रम यहां के लोगों का सबसे बड़ा धर्म है। भारत के भू–भाग पर मौलिक संस्कृति के इस बेजोड़ और अनूठे अध्याय की वंशकीर्ति जौनसार बावर निवासियों के कंठ–राग में यमुना की कल–कल तथा नैसर्गिक सौन्दर्य की स्वच्छन्द तन्मयता में प्रवाहमान झरनों की मधुर अनुगूंज की भांति झंकृत होती है। यह रोचक अतिरंजित विषय अभी तक बौद्विक ज्ञानपिपासुओं एवं विज्ञ पाठकों के लिए अछूता रह गया है। इन लोकगीतों में पुष्ट समृद्ध, श्रेष्ठ साहित्य छिपा है। देश के अन्य आंचलिक लोक–साहित्य की तुलना में जौनसारी लोकगीतों का साहित्यिक मूल्यांकन उसकी मौलिकता, मर्मस्पर्शी प्रभावोत्पादकता, सदाशिव कल्पना, लय–गीत, ताल–छन्द, सौष्ठव, शब्द–शिल्प तथा अर्थ गांम्भीर्यता आदि प्रयुक्त हर दृष्टिकोण से उत्तमोत्तम है। जैसा कि ऊपर वर्णन किया जा चुका है, जौनसार बावर के सामाजिक संव्यूहन एवं आर्थिक राजनीतिक पृष्ठभूमि को लेकर कुछ विद्वानों ने यहां के सामाजिक परिवेश पर शोध कार्य तथा लेखादि के रूप में प्रकाश डालने का न्यूनाधिक प्रयास किया है किन्तु प्रामाणिक–लिखित तथ्यों के अभाव में यहां के लोक जीवन का सत्यपरक वास्तविक दिग्दर्शन करने में विषय की विश्वसनीयता संदिग्ध प्रतीत होती है। प्रत्युत्तर साहित्य, कला और संस्कृति के समन्वय से निर्मित जौनसार बावर का वह सामाजिक स्वरूप आज तक अव्यक्त तथा अदृश्य है जिसके उन्नयन के जीवन्त प्रमाण यहां के लोकगीत हैं। इन लोकगीतों के वैविध्य एवं जीवन दर्शन पर अनुसंधान कार्य किया जाय तो उसकी

प्रामाणिकता इस क्षेत्र की भावभूमि पर यहां के विद्वानों द्वारा सिद्ध होनी चाहिए।

जौनसार बावर रंवाई, जौनपुर और हिमाचल प्रदेश के सीमावर्ती क्षेत्रों में परस्पर रीति–रिवाजों, बोली–भाषा, वेशभूषा तथा रहन सहन के तौर तरीकों में लगभग साम्य है। इनके परस्पर वैवाहिक सम्बन्ध भी प्राचीन काल से ही हैं। त्यौहार मेले भी समान रूप से एक जैसे हैं। देवी–देवताओं की पूजा, विधि तथा सामाजिक मान्यताओं में भी लगभग पर्याप्त साम्य है। ये क्षेत्र भी जौनसार बावर की ही तरह आदिवासी क्षेत्र हैं, आर्यवंशीय मूल के लोग हैं। जाति व्यवस्था और वैवाहिक पद्धतियों का स्वरूप भी समान है। जन्म–मृत्यु के संस्कार और खेती तथा पशुपालन के तरीके भी एक जैसे हैं। परन्तु प्रशासनिक सीमा रेखा के कारण इनकी पहचान के अलग नाम हैं। जौनसार बावर में प्रचलित बहुपति प्रथा के प्रचलन को पाँडवों से जोड़ा जाता रहा है जो उचित प्रतीत नहीं होता। इस विषय पर अतीत से वर्तमान तक अनेक शोध कार्य और लेख लिखे जा चुके हैं। यहां तक कि विद्यालयों और विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में मानव विज्ञान तथा समाजशास्त्र की पुस्तकों में भी इसका वर्णन है। बहुपति प्रथा को लेकर सदा ही कुछ अधकचरे लेखक यदा कदा पत्र पत्रिकाओं में अनर्गल असत्य बातें लिखते रहे हैं। वास्तविकता यह है कि बहुपति प्रथा का पाँडवों से कुछ लेना–देना नहीं है। जौनसार बावर के लोग पाँडवों के वंशज नही अपितु पाँडव जौनसार बावर के वंशज थे।

मौलिक लोक संस्कृति की इस समृद्ध विरासत की रक्षा करना जहां प्रत्येक जौनसारी का नैतिक कर्त्तव्य है वहीं सरकार की भी यह संवैधानिक वचनवद्धता है कि विश्व की इस सर्वोत्तम संस्कृति कीउत्तरदायित्व पूर्ण ढंग से सुरक्षा हो। जौनसार बावर की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर कोई भी आधिकारिक प्रकाशित पुस्तक उपलब्ध न होने के कारण बाहरी लेखकों को अपने विचार–प्रवाह की स्वतंत्रता मिल गई और उन्होंने अपने लेखकीय धर्म का पालन न करते हुए अनर्गल, असत्य, निर्मूल तथा मनघड़न्त बातें लिख कर इस क्षेत्र के साथ न्याय नहीं किया। शोधार्थियों ने भी कस्बों–नगरों तक जाकर अल्पज्ञ लोगों से पूछ कर असम्मत बातें लिखकर अपनी अल्पज्ञता का परिचय दिया है। उन्होंने क्षेत्र के भीतर प्रवेश कर दूरदराज के गाँवों तक जाने की जहमत नहीं उठाई। शार्ट कट का मार्ग अपनाया और एक विशुद्ध मौलिक संस्कृति को अपने भौंडे कथनों से इस क्षेत्र को अजायबघर बना दिया। जौनसार बावर एक सांस्कृतिक, आर्थिक एवं सामाजिक अध्ययन इसी उद्देश्य से लिखा गया जिससे देश–विदेश के लोगों को इस संस्कृति का वास्तविक दिग्दर्शन हो सके और इस क्षेत्र से सम्बन्धित अनर्गल लेखन पर विराम लग सके। लोग जौनसार बावर के लौकिक परिवेश के अलौकिक दर्शन कर सकें।

**जौनसार बावर की एक संक्षिप्त झलक**

| | |
|---|---|
| जनपद | देहरादून का जनजातीय क्षेत्र जौनसार बावर |
| तहसीलें | चकराता, कालसी, त्यूनी |
| विकास खण्ड | चकराता, कालसी |
| क्षेत्रफल | 1002.07 वर्ग कि०मी० |
| वनक्षेत्र | 64 प्रतिशत |
| खतें | 39 |
| राजस्व ग्राम | 358 |
| ऊँची चोटी | 9023 फीट देववन |
| धार्मिक तीर्थस्थल | रयागी, हनोल, थैना, बिसोई, लखवाड़, टगरी, लकस्यार (महासू मन्दिर), लाखामण्डल (शिव मन्दिर), मैन्द्रथ, (देवलाड़ी मन्दिर), सहरान (शिलगूर देवता), गबेला (कुकुर्सी देवता) |
| पर्यटन स्थल | हनोल, लाखामण्डल, चकराता, कालसी, साहिया, देववन, मुंडाली, कोटी, कनासर, नागथात, लखवाड़, बैराटगढ़, चौलीथात, मानथात, कथियान |
| नदियां | टोन्स, यमुना, पावर, अमलावा नदी |
| मौसम | ग्रीष्म, वर्षा, शीतकाल |
| ऋतुएं | ग्रीष्म, बसन्त, वर्षा, शिशिर, शीत, हेमन्त |
| पडोसी क्षेत्र | हिमाचल प्रदेश, टिहरी गढ़वाल, रवाई |
| जिला पंचायत सदस्य | चकराता ब्लाक 4, कालसी ब्लाक 4 |
| ग्राम सभाएं | 164 |
| लोकगीत | मांगड़, छोड़े, भारत, जंगू, बाजू, सीलोग, तान्दा के गीत, ठंडाकिया गीत, कृषि गीत, मातरिया गीत, श्हईलार, पौणाई गीत, टुंडू, बेणी, हारूलगीत आदि |
| लोक नृत्य | जंगबाजी, मंडावणा (पाँडवनृत्य), सरांई, झेंता, रासो, घीई, धुमसू, गुंड्या रासो, हंदिया नृत्य, ठाउड़े नृत्य, हरिण नृत्य, परात नृत्य, हारूल, पौणाई नृत्य आदि |
| प्रमुख त्यौहार | माघ त्योहार, बिस्सू, दीपावली, जागड़ा पांचोई (दशहरा), कइलू की जातरा, काल्या की जातरा, मौण, नेठाउण, कोदों की नेठाउण, केसरी मेला, नागों की कांउणी, जोलोटी |
| मुख्य व्यवसाय | कृषि एवं पशुपालन |
| मुख्य फसलें | गेंहू, जौ, मटर, चना, मंडुवा, मक्का, चेणी, कांउगी, झंगोरा |
| इष्ट देवता | महासू देवता |
| बोली | जौनसारी |

आदिवासी क्षेत्र जौनसार बावर प्राचीन काल से ही अपनी मौलिक सांस्कृतिक पहचान के लिए विश्व में विख्यात है। प्रशासनिक दृष्टि से यद्यपि जौनसार बावर को गढ़वाल मंडल का अंग माना जाता है परन्तु अपनी मौलिक संस्कृति, रीति–रिवाज, बोली–भाषा, रहन–सहन, वेश–भूषा और पृथक जीवन शैली के कारण इसका अपना अलग अस्तित्व और पहचान है।

**नामकरण**

जौनसार बावर में स्थित कालसी एक समय कुलिन्द राज्य की राजधानी थी। इसके आसपास का क्षेत्र जमुना प्रदेश कहलाता था। यहां के लोग आर्यवंशी हैं। स्वयं को आर्यों की संतान मानने वाले जौनसारी लोग गौर वर्ण, हँसमुख स्वभाव, मृदुभाषी और विनम्र प्रकृति के हैं। जीविकोपार्जन के लिये कर्म के प्रति समर्पित

जौनसारी लोग निश्छल और आत्माभिमानी स्वभाव के होते हैं। ये सादगी भरा सरल जीवन बिताते हैं। छल–प्रपंच, असत्य, अस्तेय जैसे अवगुणों से ये सदैव दूर रहते हैं। अरब विद्वान अलबेरुनी ने जौनसारियों को यवनों से जोड़कर इसके नामकरण को यवन जाति के होने के कारण यौवनसार नाम दिया जो बाद में जौनसार बन गया। परन्तु डा० शिव प्रसाद डबराल ने इस क्षेत्र को यमुना प्रदेश से जोड़ा और यमुना के इस आर जौनसार और जमुना के उस पार के क्षेत्र को जौनपुर नाम दिया, जो अधिक सत्य है। इसके उत्तर में प्रवाहमान पाबर नदी है जो रंवाई जौनपुर क्षेत्र से जौनसार बावर को अलग करती है। इसी नदी के कारण बावर शब्द जौनसार से जुड़ गया और इसका नाम जौनसार बावर पड़ गया। सीमाएं – इसकी उत्तर दिशा में हिमाचल प्रदेश और जनपद उत्तरकाशी, दक्षिण में देहरादून जनपद की विकासनगर तहसील, पूरब में टोंस नदी तथा दक्षिण में यमुना नदी है। यह क्षेत्र उत्तरी अक्षांश ३० डिग्री तथा डिग्री के मध्य तथा पूर्वी देशान्तर 70 से 78 डिग्री के मध्य स्थित है। क्षेत्रफल – जौनसार बावर का कुल क्षेत्रफल 1002–07 वर्ग किलोमीटर है। समुद्रतल से इसकी ऊंचाई तिलवाड़ी व हरिपुर कालसी में जहां मात्र 1500 फीट है वहीं देववन व खड़म्बा में 10,000 फीट है।

जौनसार बावर में इस समय 39 खतें और और 417 गाँव हैं। इनमें राजस्व गाँवों की संख्या 358 है। खत कई गांवों की प्रशासनिक इकाई को कहते हैं। एक खत में 10 से 20 गाँव होते हैं। खत का मुखिया पहले सदर स्याना होता था अब वही अधिकार ग्राम प्रधानों को मिल गये हैं। एक खत में अब कई ग्राम सभाएं बन गई हैं। ग्राम प्रधान उनके मुखिया होते हैं।

**जनसंख्याः** जौनसार बावर को सन् 1928 में जनपद देहरादून में मिलाया गया था। तब इसकी कुल संख्या 28 हजार थी। उससे पूर्व यह हिमाचल राज्य का अंग था। हमारे देश में जनसंख्या की सही जानकारी के लिए जनगणना का आधिकारिक कार्य सन् 1981 से आरम्भ हुआ। सन् 1997 की जनसंख्या के आधार पर इस क्षेत्र की कुल आबादी 1,08,000 के आस–पास थी। अब यह आबादी 1,85,000 के आस–पास है, जिसमें महिलाओं की अपेक्षा पुरुषों की संख्या में अधिक वृद्धि हो रही है। 1991 की जनगणना के अनुसार यहां प्रति 1000 पुरुषों के अनुपात में 885 महिलाएं थीं जो राष्ट्रीय पुरुष–महिला मानक अनुपात 1000 : 927 से बहुत कम है। यह भी कम चिन्ता का विषय नहीं है। पुरुषों व महिलाओं की साक्षरता का अनुपात क्रमशः 37:14 है। यद्यपि साक्षरता दर में वृद्धि की अपेक्षा है किन्तु वर्तमान में इस क्षेत्र में कुल साक्षर व्यक्तियों की संख्या लगभग 25000 है, जिनमें 19000 पुरुष और 6000 महिलाएं हैं। इन आँकड़ों से पता चलता है कि यहां शिक्षा की दशा कितनी शोचनीय है।

**शिक्षा व्यवस्था**

वर्तमान में जौनसार बावर में 275 प्राथमिक विद्यालय, 50 से अधिक जूनियर हाई स्कूल, 9 हाई स्कूल तथा 7 इन्टर कालेज हैं। इसके अतिरिक्त कुछ संस्थाओं द्वारा स्वचालित विद्यालय तथा कुछ अंग्रेजी माध्यम के स्कूल हैं। इतने बड़े क्षेत्र में एक भी स्नातक और स्नाकोत्तर विद्यालय नहीं था। अब वर्ष 2004 में एक स्नातक विद्यालय चकराता में खुला है। इसके लिए भी क्षेत्रवासियों द्वारा लम्बे समय से मांग की जा रही थी। जौनसार बावर के लोग हिन्दू धर्म के अनुयायी हैं। ये प्राचीन आर्यों की सन्तान है। इस समाज के रीति रिवाज हिन्दू धर्म के ही रीति रिवाज हैं। किन्तु जनजातीय आदिवासी क्षेत्र होने के कारण कुछ अपने भी रीति रिवाज व सामाजिक मान्यताएं हैं। इन भिन्न प्रकार के रीति–रिवाजों में बाल विवाह, बहुपति व बहुपत्नी प्रथाएं, लड़की के घर लड़के की बारात जाना, छूट (तलाक) प्रथा आदि विशेष है।

शिक्षा के प्रचार–प्रसार के साथ अब ये प्रथाएं धीरे–धीरे समाप्त हो रही हैं। बाल विवाह लगभग समाप्त–सा है। विवाह की प्रथाओं में भी अब परिवर्तन आ रहा है। यहां वर पक्ष की ओर से वधु के घर बारात ले जाने की प्रथा का श्रीगणेश हो चुका है।

**विवाह की प्रथाएंः** इस क्षेत्र की विवाह की प्रथाएं प्राचीन मनीषियों ने बहुत चिन्तन मनन के बाद पर्वतीय भौगोलिक स्थिति और आर्थिक दशा के आधार पर समाजोपयोगी और विज्ञान सम्मत रीति–नीति पर निर्धारित की थी, जिनके अनुसार तीन प्रकार के विवाह यहां प्रचलित हैं– बैवाके, बोईदोदीके और बाजदिया विवाह।

**श्बैवा का जोजोड़ाः** अत्यन्त साधारण प्रकार का विवाह होता है, इसमें पाँच बर्तन देते हैं जिसे पंचभंड्याई कहते हैं। 10–12 लोगों की उपस्थिति में पंडित वर–कन्या को परिणय सूत्र में बाँध देता है। इस विवाह (जोजोड़े) में वर–कन्या के वस्त्र, दैनिक प्रयोग की चीजों का दहेज और सौ–पचास रुपये कन्या के पर्स में डाल दिए जाते है जिसे – कन्या की ज्वाड़ कहते हैं। कम खर्च का यह सबसे सस्ता विवाह होता है, जिसे गरीब से गरीब व्यक्ति भी आसानी से कर सकता है। बोईदोदी का जोजोड़ा दृ इसका स्तर कुछ अच्छा होता है।

इसमें सगे सम्बन्धियों तथा परिचितों को आमंत्रित कर अपनी सामर्थ्य के अनुसार व्यय किया जाता है। कन्या को दान–दहेज में भी दैनिक प्रयोग की सभी वस्तुएं दी जाती हैं। आमंत्रित और बारातियों की अच्छी आवभगत की जाती है। इस विवाह को जोजोड़ा कहते हैं।

बाजदिया जोजोड़ा यह उच्च कोटि का शान–शौकत–वाला विवाह होता है। जिसमें कन्या पक्ष वाले वर पक्ष के यहां बाजे–गाजे (बैण्ड) के साथ बारात ले जाते, दुल्हन को डोली में बिठा कर ले आते हैं। बारातियों (जोजोड़ियों) की संख्या भी सैकड़ों में होती है। ऐसे विवाह की तैयारी में 2–3 वर्ष लग जाते हैं। लड़की को दहेज में प्रचुर मात्रा में सामान दिया जाता है। किसी समय ओखली, भैंस, गाय तक दहेज में दी जाती थी। गाय के सींग चांदी से मढ़े जाते थे। यहां दहेज की प्रथा नहीं है परन्तु खुशी से लड़की को दैनिक उपयोग की वस्तुएं जैसे दरांती, रस्सी, गोडनी, बंटा, थाली, परात, लोटा, गिलास आदि वस्तुएं दी जाती थीं। अब यातायात की सुविधा के कारण बारात बस में बैठकर जाती है तथा दहेज के बदले हुए मानकों में घड़ी, रेडियो, टी०वी०, स्कूटर आदि देने का प्रचलन बढ़ रहा है। विवाह अब अधिक खर्चीले हो रहे हैं।

**त्यौहार मेले**

जौनसार बावर मेले और त्यौहारों का क्षेत्र है। माघ त्यौहार, बिस्सू, दीपावली और पाँचोई (दशहरा) यहां के मुख्य पर्व हैं। दीपावली यहां शेष भारत से एक माह बाद मनाई जाती है जिसे पहाड़ी देयाई या पुराणी देयाई कहते हैं। माघ के महीने में घर के भीतर होने वालें एकल नृत्य होते हैं। पौणाई के आयोजन होते हैं जिसमें तुडू और बेणी की हारूलों की धूम रहती है। इन त्यौहारों को मनाने के यहां नितान्त अलग तौर–तरीके हैं। मेलों का भी पारम्परिक रूप से आयोजन होता है।

प्रसिद्ध गनियात का मेला, पाँचोई का मेला, गोगा की जातरा, काल्या की जातरा आदि अनेक ऐसे मेले लगते हैं जहां स्त्री–पुरुष, बाल, वृद्ध और युवा पारम्परिक वेश–भूषा में सजकर जाते हैं और छोड़े, रासो, झेन्ता, जंगबाजी, हारूल नृत्यों तथा लोकगीतों की धूम मचाते हैं। इस क्षेत्र में आदि काल से ये मेले और त्यौहार ही मनोरंजन के मुख्य साधन हैं। धार्मिक मान्यता महासू देवता इस क्षेत्र का कुल देवता है। बासिक पबासि बोठा और चालदा चारों भाई महासुओं के प्रति यहां अगाध श्रद्धा और असीम आस्था है। महासू की ही तरह अन्य देवी देवताओं जैसे

कुकुर्सी, सिलगूर, भदराज, कैलू, काली, हनुमान आदि भी यहां पूजा–उपासना के केन्द्र में स्थित है। महासू देवता के बाद पाँचों भाई पाँडवों, कुन्ती, द्रोपदी, मादरी के प्रति भी असीम श्रद्वा व आस्था व्यक्त की जाती है। पाँडवों की स्मृति में आज भी हर गाँव में पाँडव नृत्य (मंडावणा) का आयोजन होता है।

**वेशभूषाः** जौनसार बावर की वेशभूषा अत्यन्त आकर्षक है। यहां महिलाएं घाघरा (लेंहगा), कुर्ती (चोली), झगा (कमीज) और सिर पर काले रंग का ढाँटू (साफा) पहनती है। पुरुषों की पोषाक में चोडा (कोट), झंगेल (ऊनी पायजामा), डिगुवा (ऊनी टोपी), झगा (कमीज) तथा पाँवों में ऑल (जूता), बर्फ में चलने के लिए एक विशेष भेड़–बकरी के बालों का जूता होता है जिसे खुरसा कहते हैं, पहनते हैं। पुरुषों में गर्मी के दिनों में कोट, पायजामा, कमीज और टोपी पहनने का भी रिवाज है। अब महिलाएं सलवार कमीज तथा साड़ी पहनने लगी हैं तथा पुरूष पैन्ट, कोट, बुशर्ट, जीन्स पहनने लगे हैं।

मुख्य व्यवसाय जौनसार बावर के लोगों का मुख्य व्यवसाय कृषि और पशुपालन हैं। सीढ़ीनुमा खेतों में ये कठिन परिश्रम से सभी प्रकार के अनाज पैदा कर लेते हैं। धान, गेंहू, चना, ज्वार, बाजरा, मंडुवा, चौलाई, चेणी, कांउणी, झंगोरा की फसलें यहां के किसान बहुतायत से उगाते हैं। यहां पथरीली जमीन में फाफड़ा (कोटू) और कुलथ की दाल उगाई जाती है। लोबिया, उड़द, तोर, मसूर, चना, मूंग और राजमा की दालें यहां अच्छी उत्पन्न होती हैं। यहां का राजमा विश्व में प्रसिद्ध है। नगदी फसलों में यहां आलू, मटर, अदरक, अरबी, राजमा और अब टिमाटर की खेती की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट हुआ है। फलों में यहां सेव, खुमानी, चुल्लू, अखरोट और आडू प्रचुर मात्रा में उत्पन्न होते हैं। यहां ऊंचाई वाले क्षेत्रों में सेव–खुमानी के बाग भी लगे हैं परन्तु विपणन की उचित व्यवस्था न होने से किसानों को नगदी फसलों और फलों की खेती से वांछित लाभ नहीं मिलता।

पशुपालन यहां का कृषि के साथ प्रमुख व्यवसाय है। भैंस, गाय, भेड़ और बकरी पालना सब के लिए अनिवार्य है। दूध, घी के लिए तथा खेतों में खाद के लिए पशुओं को पालना जरूरी होता है। प्रत्येक किसान के पास एक या दो जोड़ी बैल होना भी आवश्यक है। शीत प्रदेश होने के कारण ऊनी वस्त्रों की पूर्ति के लिये भेड़ पालन प्रायः प्रत्येक परिवार के लिये लाभदायक होता है।

चिकित्सा सेवा के अभाव तथा दुर्व्यवस्था के कारण यहां झोलाछाप वैद्य हकीमों के चक्कर में भोले और पीड़ित लोग फँस जाते हैं जो चिकित्सा के नाम पर लोगों का शोषण करते हैं।

**अंध विश्वासः** स्थानीय मान्यताओं के कारण लोग दवा से अधिक झाड़ा–टोटका और तंत्र–मंत्र में अधिक विश्वास करते हैं। प्राचीन काल से ही आदिवासी परम्पराओं में इन आडम्बरों के प्रति लोगों में आस्था रही है। आज भी डॉक्टरों के पास न जाकर बाकी, माली या पंडितों के पास जाते हैं। इन पर देवता अवतरित होता है। ये अपनी तंत्र विद्या से डाग (डायन) भूत–प्रेत, नजर, जादू टोना, टोटका या मातरिया का प्रकोप बताकर अनिष्ट को रोकने के उपाय बताते हैं। दोनों हाथों से लूटने का उपक्रम करते हैं। दो पाए, चौपाए की बलि चढ़ाने को भी उद्यत करते हैं। इस प्रकार माली, बाकी और ब्राह्मणों द्वारा अस्थमा, क्षयरोग कैंसर और मधुमेह जैसे असाध्य रोगों को गंडा ताबीज, तंत्रमंत्र या पूजापाठ द्वारा ठीक करने का भ्रम फैलाकर जीवन के साथ क्रूर मजाक किया जाता है। वैसे तो पहाड़ हो या मैदान ग्राम्याचलों में यह बुराई सर्वत्र व्यापक स्तर पर प्रचलित है परन्तु आदिवासियों की जीवन पद्धति में यह बुराई आदिकाल से मान्यता का हिस्सा बनी हुई है। आदिवासियों की मान्यता के दो विशेष बिन्दु ये भी है कि ये लोग मेड का मांस खाना पाप समझते हैं साथ ही दूध बेचना भी अधर्म समझते है। कहावत है कि दूध और पूत कुणे बेचा दूध और पूत कौन बेचता है आज की जिन्दगी की कशमोकश में सरकारी नौकरियों में सबके पूत थोक में बिकने को लालायित है। जहां तक भेठ की बात है तो लोग भेड़ को पवित्र और मनुष्य की हितैषी मानते हैं। उसके शरीर की ऊन से बने गर्म कपडों की बदौलत ही शीत ऋतु में लोगों को ठंड से राहत मिलती है। ऐसी परोपकारी माँ जैसा त्याग करने वाली भेड़ को मारना व उसका मांस खाना लोग पाप समझते हैं। यह अलग बात है कि कलियुग के काले पजे नैतिकता, दीन ईमान और दया–धर्म की खाल चीरकर मानवता को इतना अधम् खूखार और भयावह बना रहे है कि लोग आदमी को ही जिन्दा निगल रहे हैं. बेचारी भेड़ की क्या बिसात ? सरल जौनसारी लोग निहायत विनम्र और ईमानदार होते हैं। आज भी यहां घरों में ताला लगाने का रिवाज नहीं है। खेतों में अनाज पढ़ा रहता है। दूसरों की कोई वस्तु चुराना या जबरन प्राप्त करना यहाँ घोर पाप समझा जाता है। यह सही है कि युग ने यहां के लोगों के सद्गुणों पर छल–कपट के पैख बाँध दिए हैं पर अभी ऊंची उड़ान भरने से डर लगता है। अतीत की स्याणाचारी प्रथा के कुछ मयावह अंश निकाल दें तो यहां का समाज एक आदर्श समाज कहलाने का अधिकारी है। यहां सुख–दुख को परस्पर बराबर बीटने की प्राचीन परम्परा है।

**प्रमुख परम्पराएं**

किसी भी क्षेत्र की पहचान उसकी परम्पराओं में गुम्फित होती है। जनजातीय क्षेत्र जौनसार बावर की पौराणिक, धार्मिक और सामाजिक परम्पराओं का अपना सार्वभौम स्वरूप है। ज्ञान और अनुभव के द्वारा विकसित इस क्षेत्र के सारे संस्कार इन परम्पराओं में निबद्ध है। वे परस्पराये जौनसारी समाज द्वारा ग्राह्य व स्वीकार्य परम्पराएं हैं। आज के वैज्ञानिक युग में भी अपने आदिम स्वरूप के उन समस्त संस्कारों की लय को जिससे इस क्षेत्र की सांस्कृतिक पहचान बनती है. अपने मूल पारस्परिक परिवेश में देखकर हैरानी अवश्य होती है कि वह कौन से कारक है जिनके कारण समाज में जीवन मूल्यों की वह आदि सनातन परम्पराएं अब तक वास्तविक रूप स्वरूप में विद्यमान है। जब पौराणिक परम्पराओं के दर्पण में झाँकते हैं तो उस पुरातन समाज का वह प्रतिबिम्ब उभर कर सामने आ जाता है जिसमें सामूहिकता की भावना संयुक्त परिवार की प्रणाली के रूप में फलती–फूलती दृष्टिगोचर होती है। संयुक्त परिवार प्रणाली इस क्षेत्र को एकता और पारस्परिक स्नेह के पवित्र बन्धन में बांधती है। यह एक ऐसी अध्ययन शाला है जिसमें रहकर व्यक्ति मनुष्य बनता है। बड़ों के प्रति आदर और छोटों के प्रति स्नेह का व्यवहार परिवार में रहकर ही सीखा जाता है। सुख और दुख में समान भाव से सम्वेदनशील होना, अनुशासित होकर परिवार के प्रशासन में रहना, परिवार के उत्स और उत्थान में अपना निःस्वार्थ योगदान देना ये कुछ ऐसे विचार बिन्दु हैं जिनके अभाव में मनुष्य पशुत्व को प्राप्त होता है, और संयुक्त परिवार ऐसी पाठशाला है जहां मनुष्य होने के सारे गुण और गुर स्वत सीखने का अवसर मिलता है।

परिवार को जौनसार में कबीला कहते हैं। कुटुम (कुटुम्ब) कहते है। यह कबीला एक सस्थान है। घर का मुखिया इसका निदेशक होता है। वह सब के प्रति उत्तरदायी होता है। परिवार को संचालित करने के लिए यह सब कार्य बाँट देता है। गाय, भैंस, बकरी कृषि विपणन, इंधन आटा पीसना और बाह्य सम्पर्क। ये सब परिवार रूपी संस्थान के अनुभाग होते हैं। घर के प्रत्येक व्यक्ति को मुखिया इन सब विभागों का स्वतंत्र प्रभार सौंप देता है। कंवल सब पर निगरानी व सबको बराबर का सहयोग प्रदान करना उसका नैतिक दायित्व होता है। सबके बच्चों प परिवार के प्रत्येक सदस्य के साथ सुख व दुख में समान व्यवहार करना उसका धर्म होता है।

यह पौराणिक परम्परा तब से चली आ रही है जब जौनसार बावर के आदि मानव ने कुटुम्ब बसाकर इस निर्जन वीरान बीहड़ और भयानक क्षेत्र में रहना आरम्भ किया था। संयुक्त परिवार प्रणाली का वैभव आज भी इस क्षेत्र में सहसहयोग और सहकारिता के मानवीय उच्चादशों की महिमा को महिमामंडित किए हुए हैं। ग्राम चिल्हाड में प० माधोराम बिजलवाण का 150 सदस्यों का संयुक्त परिवार न केवल जौनसार बावर में अपितु पूरे देश में एक अनूठा उदाहरण है। सुसंस्कृत, सुसम्य सुशिक्षित, सुसंगठित और सुसम्पन्न यह परिवार एक ऐसा उदाहरण है जिस पर जौनसार बावर को गर्व है। इस परिवार में यह बात व्यवहारिक रूप में देखने को मिलती है कि संगठन में कितनी अथाह और अपरिमित शक्ति है. इस परिवार ने यह सिद्ध कर दिया है। संयुक्त परिवारों की यह अनूठी पौराणिक परम्परा इस क्षेत्र में उल्लास और उत्सव के साथ जीवित है। सामाजिक परम्पराओं में यहां चर्चित बहुपति प्रथा पर बहुत कुछ लिखा जा रहा है जो असत्य और अनर्गल है। इस प्रथा का शुभारम्भ यहां पांडवों से जोड़कर प्रचारित–प्रसारित किया गया है। वास्तव में पर्वतीय आर्यों में बहुपतित्व प्रथा प्राचीन परम्परा का हिस्सा है।

जौनसार बाबर में बहुपति प्रथा का प्रचलन है। साथ ही या बहुपत्नी प्रथा का भी प्रचलन है। यह प्रचलन बहुत कुछ यहां को भौगोलिक परिस्थिति पर भी निर्भर करता है। बहुपति प्रथा यहां के समार द्वारा स्वीकृत प्रथा है। यहां के समाज की मान्यता का यह एक जान हिस्सा है। अतः उस पर उंगली उठाने का किसी को अधिकार नहीं है। बहुपति प्रथा के अन्तर्गत पत्नी का विवाह बड़े भाई के संग होता है। शेष छोटे भाईयों की भी यह पत्नी होती है। परन्तु बड़े भाई के सम्मुख छोटे भाई सदैव मर्यादा का पालन करते है। अमर्यादित और अशोभनीय व्यवहार का आज तक कोई उदाहरण इस समाज में उत्पन्न नहीं हुआ है। बहुपत्नी प्रथा के अन्तर्गत सब पत्नियों का विवाह बड़े भाई के साथ ही सम्पन्न होता है। यह प्रथा भी प्राचीन और प्रचलित प्रथा है। दोनों प्रथाएं देश के अनेक हिस्सों में प्रचलित है तथा विश्व के अनेक देशों में इसका प्रचलन है। बीहड क्षेत्रों में भौगोलिक परिस्थितियों के कारण परिवार को व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिए इन प्रथाओं को अंगीकृत किया गया।

1. बैवा का जोजोड़ा, 2. बोईदोदी का जोजोड़ा 3. बाजदिया जोजोड़ा

1. **बैवा का जोजोड़ा (विवाह):** एक सामान्य और कम खर्चीला विवाह होता है। सामान्य से सामान्य व्यक्ति भी यह विवाह सरलता से सम्पन्न कर सकता है।

2. **बोईदोदी का जोजोड़ा:** यह एक अच्छा विवाह होता है। इसमें आमंत्रित अतिथियों की संख्या व विवाह का स्तर अच्छा होता है।

3. **बाजदिया जोजोड़ा:** यह एक उत्तम विवाह होता है। ऐसा विवाह समाज के सम्पन्न लोग आयोजित करते हैं। बाजे गाजे के साथ सम्पन्न होने वाले इस विवाह में सैकड़ों बाराती और आमंत्रित अतिथि होते हैं।

विवाह में मांगलगीत (मांगङ) गाये जाते हैं बाजगियों द्वारा गगल धुन बजाई जाती है। वर की अपेक्षा बारात कन्या पक्ष की ओर से वर पक्ष के घर ले जाई जाती है। भोजन करते समय बारातियों को गाली देने का भी रिवाज है। गाँव की लड़कियां मौज मस्ती में यह प्रमोद करती हैं। दहेज की प्रथा यहां नहीं है परन्तु दैनिक प्रयोग की वस्तुएं जैसे बर्तन दरीती, रस्सी, गोडनी आदि वस्तुएं दहेज में दी जाती थी अब परिवर्तन के दौर में स्कूटर, टी.वी. रेडियो जैसे उपकरण देने का भी प्रचलन हो गया है। बारात लड़के वाले लड़की वालों के यहां भी ले जाने लगे है। यहां छूट (तलाक) अपनी रजामन्दी से होती है।

यहां के लोग धर्म के प्रति गहरी आस्था रखते हैं। हिन्दू धर्म के मानने वाले जौनसारी लोग राम, कृष्ण, विष्णु, ब्रह्मा, हनुमान, काली आदिसभी हिन्दू देवताओं के प्रति आस्था रखते है तथा उनकी पूजा–उपासन करते है।। शैव और वैष्णव मतावलम्बी होते हुए भी अपने कुल महासू के प्रति गहरी आस्था और विश्वास रखते हैं। महासू देवता इर क्षेत्र के सबसे बड़े और सब से अधिक प्रसिद्ध देवता है। हनोल इस का महान तीर्थ है जहाँ महासू देवता का मन्दिर है।

महासु देवताओं में बासिक, पवासी, बोठा और चालदा देशा के प्रति पूरे क्षेत्र के लोगों में असीम भक्ति भावना है। अन्य स्थानः देवता, शिलगूर, कईलू, कुकुरसी शुकरात भैरव आदि देवताओं को भी पूजा का पूर्ण विधान है। जौनसार बावर में न्याय मांगने भी देवता के मन्दिर में जाते है। यदि न्यायालय अथवा ग्राम पंचायत के द्वारा सत्य के विरुद्ध निर्णय सुन दिया जाय तो वाटी अथवा प्रतिवादी देवालय में न्याय की गुहार कर है। उन्हें विश्वास होता है कि देवता अवश्य दूध का दूध और पानी का पानी करेगा।

अन्याय की मार झेलने वाला मुँह में घास और गले में रस्सी कर स्वयं को यह प्रदर्शित करता है कि यह जो पशुवत् है उस घोर अन्याय हुआ है यह देवता से प्रार्थना करता है– देवा आऊ त काड़ी गौ अ. तू दूध को दूध अर पाणी देया करी। हे देवता मैं तो काली गी (पशु के समान) हूं। तू सब जानता है. दूध का दूध और पानी का पानी कर देना। पौडवों को भी यहां देवता स्वरूप माना जाता है। यहाँ माध त्यौहार, दीपावली, बिस्सू और दशहरा (पाचोई) प्रमुख पर्व है। जागडा यहां महासू देवता के जागरण का अनुष्ठान होता है। इन त्योहारों को मनाने की अपनी अलग परम्परा है। जैसे माघ के महीने में बकरे कटते हैं। दीपावली यहां एक माह बाद मनाई जाती है जिसे पहाड़ी दीवाली पारानी कहते हैं। विस्सू त्योहार यहां बुराँस के फूलों से घर–गीय सजाने बसनोत्सव होता है। विजयदशमी को पांचोई के रूप में मनाते हैं। अनुसुचित जनजातीय क्षेत्र में त्योहारों और उनसे जुड़े मेलों को मनाने का नितान्त अपना व पृथक ढंग होता है। आदिवासियों की जीवन पद्धति में जादू टोना, तंत्र–मंत्र पूजा–पाठ और भूत–प्रेत को मानने की अटूट आस्था होती है। हर प्रकार की विपति को लोग देवता का प्रकोप मानते हैं।

चोरी–डाका अथवा अपहरण के मामले में लोग पुलिस के पास नहीं जाते। न्यायालय की शरण नहीं जाते सीधे माली या बाकी के पान चले जाते हैं। इन्हें विश्वास होता है कि वे देवता के प्रभाव से सही और त्वरित समाधान करेंगे। सूखा पड़ने की स्थिति में यहां शिलगूर देवता के यहां पूज ले जाते हैं। उन्हें आठ अनाजों से पकाया हुआ रोट (रोटी) जिसे अठनेजे का रोट कहते हैं, चढ़ाते हैं और उनसे वर्षा मागते है। शिलगूर देवता को जल का देवता भी मानते हैं। जन्म संस्कार से लेकर मृत्यु संस्कार तक की यहां की पृथक परम्पराएं हैं। जन्म होने पर शिशु को तीसरे दिन धूप दिखाते है जिसे घाम देखाणा कहते हैं। प्रसूतिका बच्चे को गोद में लिए बाहर तक आती है। बच्चे को धूप दिखा कर घर में बली जाती है। प्रसव के 15 दिन ये बन्द कमरे में रहती है। तीन बार तेज गर्म पानी से नहला कर बना में कमरकस बाध कर घी और खेण्डा (आटे का हलवा) विताते है। प्रसूतिका को भी खूब खिलाते है। 15 दिन में वह तन्दुरूस्त होकर काम काज करने लगती है।

बच्चे का नामकरण संस्कार धूमधाम से किया जाता है इसे दशरातों दशोटन कहते है। इस दिन सत्यनारायण व्रत कथाका आयोजन किया जाता है। पंडितों और बाजगियों को दान दिया जात है। घर की बहन बेटियों को भी दान दिया जाता है। मुंडन संस्कार भी किया जाता है। कुछ लोग अपने प्रथम गुरुक कंश कटवाने रेणुका के मन्दिर में हिमाचल प्रदेश जाते है। सामान्य से

बच्चे के केश किसी देवस्थल पर ही कटते हैं। विवाह संस्कार का वर्णन ऊपर किया जा चुका है। मृत्यु सरका का नियम भी कुछ भिन्न प्रकार का है। किसी स्त्री या पुरुष की मृत्यु पर नदी के किनारे उसका शवदाह किया जाता है। कुछ सम्पन्न लोग हरिद्वार ले जाकर अस्थियों विसर्जित करते हैं। परिवार के 3.5.7 या 9 लोग बालों में कैंची लगवाते हैं इसे गर लगाना कहते हैं। छाप लगाने वाले लोगों में अपने कुल के लोग भी शामिल किए जाते हैं। एक रिवाज के अनुसार पुराने समय में कृषि कार्य के लिए हरिजनों को अनुबन्धित कर नौकर रख लिया जाता था। इनका अपने ठाकुर से पीढ़ी दर पीढी का अनुबन्ध रहता था। इन्हें भी मृत्यु संस्कार में शामिल किया जाता था। ये लोग भी छाप लगवाते में। इन्हें खुण्ठित मुण्डित हाठी कहा जाता था।

मृत्युभोज मृतक का शवदाह होने के बाद तीन पाँच सात नौ या यदि बहुत बड़ा परिवार है तो ग्यारह अनुवंशिक लोग क्रिया पर बैठते हैं। ये लोग सिर पर बालों में कैची लगवाते हैं एक–डेढ़ इंच के फासले पर बालों में कैची से कट के निशान लगा देते है जिसे छाप लगाना कहते हैं। तेरहवी (उठाला) वाले दिन जो कि तीसरे पाचवे सातवे या नवें दिन होती है. घर पर नाई बुलाकर सबके बाल उस्तरे या कैंची से कटवा दिए जाते है जिसे खुण्डुणों–गुण्डुणों कहते हैं। क्रिया के दिनों में सिर पर टोपी उल्टी करके पहनते हैं। तेरहवी वाले दिन स्नान करके पंडित द्वारा विधि विधान से क्रिया संस्कार सम्पन्न होता है तथा टोपी घोकर सीधी पहनी जाती है। तेहरवी को यहाँ सुल्टो भी कहते हैं।

तेरहवीं (जठाला) वाले दिन सगे–सम्बन्धियों के अतिरिक्त गाँव–यात के लोगों को मृत्यु भोज के लिए बुलाया जाता है। मृत्यु भोज का आयोजन यद्यपि सामर्थ्य व बृद्धा के अनुसार किया जाता है पस्तु परम्परा के अनुसार सामाजिक नियमों का पालन करना पड़ता है। दाल, चावल, रोटी हलवा–पूरी व शराब आदि से भोज कराया जाता है। नाई–ब्राह्मणों को दान–दक्षिणा भी दी जाती है। मृत्यु भोज एक सामाजिक कुप्रथा है। शोक संतप्त परिवार एक ओर मृतक के शोक में संतप्त होता है दूसरी ओर न चाहते हुए भी दुखी मन से विवाह की तरह मृत्यु भोज की व्यवस्था में लगना पड़ता है। इस परम्परा का सभ्य व आज वो विकसित समाज में गलत सन्देश जाता है। मृतक चाहे वृद्ध हो या जवान मृत्यु भोज सब की मृत्यु पर दिया जाना और भी निन्दाजनक परम्परा है। अब हमारा समाज पढ़–लिख कर देश और दुनिया की तरह नई सोच के साथ आगे बढ़ रहा है। इस पुरानी परिपाटी को तोड़कर समाज में नई सोच विकसित कर परिवर्तन के नये द्वार खोलने चाहिए। जौनसार बावर में ही नहीं. मृत्युभोज का प्रचलन सभ्य समा भी है किन्तु जही भी है यहां यह नियम स्वेच्छा से बन्द होना चाहिए। सच्चे मन से मृतक की आत्मा के लिए शाति तथा परिवार व परिजनों को यह दुख सहन करने की शक्ति देने के लिए परमात्मा से प्रार्थना की

जौनसार बावर में देवता के मन्दिरों में हरिजनों और महिलाओं लिए प्रवेश वर्जित है। जागड़े या दशहरे के दिन जब देवता की पालकी बाहर निकलती है उस दिन महिलाओं के लिए तो मन्दिर प्रवेश की अनुमति दे दी जाती है परन्तु हरिजन उस दिन भी मन्दिर में नहीं जा सकते वे दूर से ही हाथ जोड़ कर देवता का स्मरण कर लेते हैं। महिलाओं के प्रवेश से देवालय दूषित हो जाता है। संध्या समय देवालय की विधिवत् पूजा–प्रतिष्ठा करके अगले जागडे तक के लिए मन्दिर के कपाट महिलाओं के लिए बन्द हो जाते हैं। कंवल बाजा बजाने वाले बाजगियों की स्त्रियां देवता के आगन में जा सकती है। अन्य महिलाओं के लिए देवांगन में जाना भी वर्तित होता है। सम्भव है इन परम्पराओं में उस काल की कुछ ऐसी मुक्तर परिस्थितियां या मान्यताएं और समाज की ऐसी रही होगी जिनकी आज के विकसित समाज में आलोचना की जाती है। वर्तमान सदैव सुधारों का काल होता है। समय के साथ सबको बदलना पड़ता है क्योंकि जो समय के साथ समझौता नहीं करता एक उपजाऊ धरातल छोड़ जाता है।

**वेशभूषा**

वेशभूषा का मनुष्य के चरित्र, स्वभाव, गीत और सदाचार से गहरा सम्बन्ध है। भारतीय दर्शन में आत्म कल्याण के लिये अनेक उपाय और योग साधनाएं हैं। लोक कल्याण के लिए भी अनेक परम्पराएं और मान्यताएं हैं। इन्ही लीक मान्यताओं और परम्पराओं का एक प्रमुख अंग है वेश–भूषा। वेशभूषा न कंवल तन का आवरण है वरन यह जीवन में आचार–विचार प्रतिस्थापित करने तथा जीवन को सशक्त और संस्कारवान बनाने का भी साधन है। वस्त्रों को सदैव देश काल के अनुसार पहनने की प्राचीन परम्परा है। विश्व के हर समाज की वेशभूषा के निर्धारण का इतिहास बताता है कि मनोवैज्ञानिक आधार पर उस समाज के भौगोलिक परिवेश के अनुरूप ही वस्त्रों का निर्धारण किया गया है।

शीत ऋतु में पुरुष ऊन का मोटा कोट पहनते हैं जिसे चोड़ा कहते हैं। टागों में ऊन का चुस्त चूडीदार पायजामा पहनते हैं जिते झंगेल कहते हैं। सिर पर ऊन की बनी टोपी धारण करते है जिस डिगुआ कहते हैं। पांवों में एक प्रकार का जूता पहनते है जिसका तला बगड़े का तथा ऊपरी भाग रंग–बिरंगी मोटे रेशे की ऊन से बनाकर तैयार करते है इसे आल कहते हैं। बर्फ के समय बकरी के ऊन का जूता पहनते हैं जिसे सुरसा कहते हैं।इस प्रकार पुरुषों की शीतकालीन वेशभूषा में चोड़ा झंगेल डिगुवा और ऑल प्रमुख वेशभूषा है। कमीज को यहां झगा सथा स्वैटर को बनियान कहा जाता है। वासकट के रूप में ऊन का मोटा और यासकट से थोडा लम्बा ठालका पहना जाता है। वासकट को सलुका भी कहते हैं।

महिलाएं चटक रंग पसन्द करती है। शीतकाल के लिए इनकी वेशभूषा में केवल इतना अन्तर होता है कि कुर्ती तो उनी कपड़े की बन सकती है परन्तु लहंगा मोटी जीन का सिलवाया जाता है। महिलाएं कुर्ती, लहगा, झगा और सिरपर डांटू (साफा) पहनती हैं। शीत ऋतु में महिलाओं के वस्त्र मोटे कपड़े के सिलवाए जाते हैं। ग्रीष्म ऋतु में पतला कपड़ा प्रयोग में लाया जाता है। महिलाएं नीले या पीले रंग का स्वैटर (बनियान) पहनती हैं। शॉल ओढ़ने का रिवाज बहुत कम है। बर्फबारी के समय ऊन की पंखी ओढी जाती है।

महिलाओं की वेशभूषा यहां अत्यन्त आकर्षक है। कुर्ती और घाघरा सिलने वाले यहां स्थानीय शिल्पकार (दर्जी) होते है जो घाघरा–कुर्ती के विशेषज्ञ होते हैं। इनकी सिलाई की विशेष विधि होती है। दोनों ही वस्त्र बहुत महगे होते हैं। घाघरा घेरदार लेहगा है। इसमें सात या नौ मीटर कपडा लगता है। जितना अधिक घेरदार होगा उसमें उतने ही अधिक सलाद पडते है जिससे वह सुन्दर लगने लगता है।

घाघरे के नीचे एक फीट चौड़ी बाहर की ओर लाल कपड़े की एक पट्टी लगती है जिसे लाऊण कहते हैं। लाऊण के ऊपर एक बारीक सफेद रंग की कोर लगती है। युवा महिलाए अब लाऊण बाला घाघरा नहीं पहनती। वो लाऊंण की जगह भीतर की ओर अस्तर लगवाती है और एक फीट के फासले पर रग–बिरंगा डेढ इस चौड़ा फीता सिलवाती हैं। लाऊण अथवा अस्तर वहीं काम करता है जो साड़ी में फॉल करता है।

टेसलीना की चीवी धापुरी
हरे छोटा का साफा
मखेमाला की कावी कुरेती
लीले बुटी का साफा
भेजा तेरे खातर बठिगी हाक आन्दाना घर।

देवारमा हिमालय की उपत्यकाओं में बसे सम्पूर्ण पर्वतांचल की वेशभूषा में भी देवतुल्य सादगी, सरलता और मौलिकता का पुट समाहित है। यह हमारे शील सरकार का परिचय भी है और सास्कृतिक पहचान का आधार भी। तब शील–स्वभाव के दायरे में कथा सांस्कृतिक स्वरूप कर वसुपेव कुटुनाम था अब उस दायरे

से बाहर स्वछन्दता की संस्कृति का वसुधैव कुटुम्बकम है। उस सास्कृतिक मर्यादा के अनुशीलन के लिए ही पिता पुत्री से कहता था–

ऊबी पर्वत बेट्ये, जाउन्दी कि जाउन्दी ना गूमा घापुरी बेट्ये लाउन्दी कि लाउन्दी ना

तब की बेटी ने पिता का आग्रह सिरोधार्य कनके अपनी देशभूषा को सगर्व धारण करने की स्वीकारोक्ति के साथ पर्वत की परिपाटी में बंधना रतीकार किया। अब की बेटी ने स्वच्छन्दता को प्राथमिकता दी। आज पर्वतांबल की महिलाए सलवार–कमीज, साड़ी और जीन्स पहनकर अपनी उत्कृष्टता प्रकट कर रही है। उन पर आधुनिकता का रम भूत सवार है। अपनी सुन्दर, मौलिक, अभूतपूर्व वेशभूषा में उन्हे हीनता और पिछड़ेपन का आभास होने लगा है। पुरुषों की वेशभूषा तो बीज रूप में भी उपलब्ध नहीं हो पाएगी। ऐसा समय शीघ्र आने वाला है। जौनसार बावर में भी आधुनिकता ने अपने पाँव पसारे हैं शहरी और पाश्चात्य संस्कृति दस्तक दे रहीं है। परिणामस्वरूप यह अद्वितीय, अदभुत, अनूठी वेशभूषा अपने सास्कृतिक परिवेश से पलायन करने को जातूर है। शिक्षा के प्रचार–प्रसार ने अपने सांस्कृतिक परिवेश के मौलिक विकास के अट्टकहास का मार्ग प्रशस्त कर दिया है अब इस कृत्रिमता की घुसपैठ पर कब और कैसे विराम लगेगा यह बताना नितान्त कठिन है। सन्तोष का विषय यह है कि जौनसार बावर में अभी भी पुरुष–महिलाओं में सामान्यत अपनी वेशभूषा में प्रति लगाव है।

## तीज त्योहार

आदिवासियों की अपनी अलग जीवन शैली होती है। यद्यपि हिन्दू धर्म के अनुयायी और देश के आदि निवासी होने के कारण यदि आप गौर करें तो इनका जीवन दर्शन ही भारतीयता के मूल स्वरूप का आदिम और प्रामाणिक अंग है। इसीलिए मुख्य त्योहार दीवाली, होली, दशहरा, रक्षाबंधन जैसे पर्व ये भी पूरे देश के साथ उसी हर्ष–उल्लास और उमंग के साथ मनाते हैं किन्तु मनाने का ढंग अलग होता है। सभ्यता के विकास के साथ समाज में नित नूतन परिवर्तन होते रहते हैं। उन्हें अंगीकृत करके आज त्योहारों को मनाने के रंग–ढंग भी बदलते रहे किन्तु ये आदिवासी समाज के लोग आज भी अपनी पुरातन जीवन की उसी पुरानी शैली को जी रहे हैं जो इनकी प्रारम्भिक स्थिति में थी। सम्भवतः आदिवासी जीवन पद्धति के दर्पण में ही समाज को अपने आदि–पुरातन स्वरूप का बिम्ब दृष्टिगोचर हो सकता है इसलिए स्वयं को आदि मानव द्वारा स्थापित रीति–रिवाज की चौखट में स्थिर और सुरक्षित रखना निःसन्देह ऐतिहासिक कार्य है। त्योहारों के साथ जब तीज शब्द जुड़ जाता है तब उसका अर्थ सरल नहीं रह जाता। उसका तात्पर्य भी यह हो जाता है कि तीज त्योहार की वास्तविकता क्या है? यह तीज शब्द भूगोल, खगोल और ज्योतिष से जुड़ा विषय है। भूगोल इन त्योहारों को भूमंडलयीय महत्त्व से जोड़ता है। खगोल आकाश मंडलीय शुभ–अशुभ की स्थिति का ज्ञान कराता है, ज्योतिष आकाश में स्थित ग्रह, नक्षत्रों आदि की दूरी, परिमाण और गति का ज्ञान कराता है। हर पर्व को मनाने की ऋतु होती है उस ऋतु के अनुसार उस त्योहार का पूरा सस्कार निर्धारित किया गया है। जैसे होली के शुभारम्भ के मंगलाचरण का पर्व है। धरती पर वसन्त अवतरित होता है। धरती नाना रग के फूलों से अपना श्रृंगार करती है तो घरती के धर्म को धारण करते हुए मनुष्य भी तन पर रंग मल कर वसन्तागमन जी खुशी में धरती के साथ मिल कर रंग पर्व होली मनाता है। भूगोल धरा पर वसन्तागमन का. खगोल समशीतोष्ण जलवायु की उपयोगित का और और ज्योतिष ग्रह नक्षत्रों की गति दूरी और परिमाम देखकर होलिकोत्सव के शुभारम्भ का ज्ञान कराता है। आदिवासी क्षेत्र जौनसार बावर के तीज त्योहारों का इतिहास भी प्रायः इन कारणों से अछूता नहीं है। भूगोल खगोल और ज्योतिष पर न कंवल आदिवासियों की अटूट आस्था हैं।

## निष्कर्ष

उपरोक्त तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि महाभारत कालीन सभ्यता से पूर्व भी यहाँ के लोग सांस्कृतिक व सामाजिक दृष्टि से संपन्न थे जैसे जौनसार मे सभ्यता का विकास होता गया वैसे–वैसे सांस्कृतिक व सामाजिक अमूल–चूल परिवर्तन होता गया इसलिए हम कह सकते हैं कि जौनसार संस्कृति को जीवंत रखने के लिए कदम उठाने होंगे द्य

## सन्दर्भ सूची

1. गढ़वाली भाषा एवं उसका साहित्य. डॉ. हरिवत्त भटट शलेष १६७६ उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान (हिन्दी सीमिति प्रभाग महात्मा गांधी मार्ग लखनऊ)
2. कुमाउँनी भाषा एवं उसका साहित्य – डॉ. त्रिलोचन पाण्डेय
3. कश्मीरी भाषा एवं उसका साहित्य–डॉ० शिवन कृष्ण रैण (1972) सम्मार्ग प्रभाग 16 यू० बी० बैंग्लोरोड़ –7
4. जौनसारी–बावरी ज्योतिष ग्रंथ – बागोई–हस्तलिपिबद्ध –अज्ञात
5. जौनसारी–बावरी ज्योतिष ग्रंथ–साँचे–हस्तलिपिवद्ध –अज्ञात
6. जौनसारी–बावरी पण्डवाणी ज्योतिष ग्रन्थ– हस्त लिपिबद्ध–अज्ञात
7. जौनसार–बाबर संक्षिप्त परिचय– के0आर. जोशी
8. जौनसार–बावर का सांस्कृतिक वृहद अध्ययन – रतन सिहं जौनसारी।